गाँधीजी

बरसात का दिन था। आसमान में बादल रह रहकर घिर आते थे। एक बालक उन्हीं की तरफ एकटक देख रहा था। देखते–देखते एकदम चिल्ला उठा, 'माँ, माँ देख, सूरज निकल आया। अब तू पारणाँ कर ले (पारणाँ उपवास या व्रत की समाप्ति पर किए जाने वाले भोजन को कहते हैं) माँ ज्यों ही बाहर आई, सूरज भगवान बादल की ओट में छिप गए। ''कोई बात नहीं मनु, भगवान की मरजी नहीं है कि मैं आज भोजन करूँ, पारणाँ करूँ। मनु की माँ ने यह व्रत लिया था कि जब तक सूर्य को देख नहीं लेंगी वे भोजन नहीं करेंगी। बरसात के दिनों में तो यह व्रत और कठिन हो जाता क्योंकि इस मौसम में तो कभी–कभी चार–पाँच दिनों तक सूरज न दिखता।

मनु/मोन्या तब बड़ा दुखी होता कहता, ''माँ, तू ऐसे कठिन व्रत क्यों लेती है ?''

माँ बस इतना ही कहती ''बेटा, जब तू बड़ा हो जाएगा, तब इन बातों का अर्थ समझ जाएगा।''

ऊपर जिन 'माँ–बेटा' की बातचीत तुम पढ़ रहे हो। उनमें माँ का नाम पुतलीबाई और बेटे का नाम मोहनदास है, माँ उसे 'मोन्या' कहती है।

मोन्या का जन्म गुजरात के पोरबंदर शहर में 2 अक्टूबर, 1869 को हुआ था।

मोन्या बहुत ही शर्मीले स्वभाव का लड़का था। अपने स्कूल के बच्चों से बात करने में भी उसे बड़ा डर लगता। बस हर समय उसे यही डर लगा रहता कि किसी बात पर उसकी हँसी न उड़ जाए। स्कूल में जब उसका नाम लिखवाया गया तब उसकी उम्र सात साल थी।

एक बार राजकोट में एक नाटक मंडली आई, जो हरिश्चंद्र नाटक खेलती थी। मोन्या ने नाटक देखने के लिए अपने पिता से आज्ञा माँगी। पिता ने तो आज्ञा दे दी मगर माँ ने एक शर्त रख दी, ''शर्त थी कि नाटक की पूरी कहानी घर आकर सुनानी होगी।''

मोन्या क्या करता, नाटक तो देखना ही था। उसने शर्त मान ली और नाटक देखने चला गया, ''नाटक का एक–एक दृश्य उसने बड़े ध्यान से देखा।

नाटक देखने के बाद, वह नाटक के पात्र हरिश्चंद्र के जीवन की कल्पना करता और रोता। उस पूरे नाटक में हरिश्चंद्र को सच बोलने के कारण कई कष्ट उठाने पड़े थे। मोन्या के मन में इस नाटक का गहरा प्रभाव पड़ा।

कभी–कभी सोचते–सोचते वह कई प्रश्न भी करता। उसके घर में उन दिनों 'ऊका' नाम का व्यक्ति सफाई करने आता था। माँ हमेशा उसे 'ऊका' से दूर रखती कि कहीं ऊका उसे छू न ले।

तब वह सोचता कि रामायण में तो लिखा है कि ऋषि वशिष्ठ ने केवट को अपनी छाती से लगाया था। और राम ने भी तो शबरी के जूठे बेर खाए थे... और

ये दोनों ही अछूत माने जाते हैं। जब वह यही प्रश्न माँ से पूछता तो माँ मन ही मन उसकी बुद्धि पर खुश होती मगर इन प्रश्नों का जवाब न दे पाती।

उस जमाने में छोटी उम्र में ही बच्चों की शादी हो जाती थी।

मोन्या भी 13 वर्ष का ही था, जब उसका विवाह हुआ। उसके पिता के मित्र की लड़की कस्तूरबा से।

वैसे तो उसे रामायण के दोहे, मीराबाई के भजन बहुत भाते थे। मगर नरसी मेहता का भजन ''वैष्णव जन तो तेणे रे कहिए, जो पीड़ पराई जाणे रे'' तो वह इतनी मस्ती से गाता कि अपनी सुधबुध ही भूल जाता।

1887 में उसने मैट्रिक की परीक्षा पास कर ली। उसके बाद की पढ़ाई के लिए उसने भावनगर के सामलदास कॉलेज में नाम लिखवाया।

लेकिन वहाँ पढ़ाई अँग्रेजी माध्यम में होती थी, इसलिए मोहन का मन ही न लगता।

धीरे–धीरे उसका मन पढ़ाई से उचट गया और थोड़े ही दिन बाद वह अपने घर लौट आया। आते ही मोन्या से परिवारवालों ने पूछा, ''बता तू क्या पढ़ेगा।'' मोन्या ने कहा ''मैं डॉक्टरी पढ़ना चाहता हूँ।''

''अरे! मुर्दे कैसे चीरेगा...? न, न, यह काम तुझसे नहीं होगा। मोन्या के पिता दीवान थे, दीवान बनने के लिए कानून का ज्ञान जरूरी होता है इसलिए सबकी यही इच्छा थी कि मोन्या विलायत जाकर कानून पढ़े।

मोन्या को भी विलायत जाकर कानून पढ़ने में कोई दिक्कत नहीं थी। मोन्या ने तो हाँ कर दी, लेकिन मोन्या की माँ बड़ी दुविधा में पड़ गई कि तीन साल वह कैसे अपने बेटे से दूर रहेगी।

माँ के मन की बात मोन्या जानता था। माँ को डर था कि विलायत जाकर मोन्या बिगड़ जाएगा, वह शराब पीने लगेगा, वह मांस खाने लगेगा...।

मोन्या ने कहा ''बा (गुजराती में माँ को 'बा' कहते हैं) तू फिकर मत कर, जिन बातों से तू डरती है। मैं उन्हें कभी नहीं करूँगा।''

बेचरगी स्वामी, एक जैन साधु थे, मोन्या का परिवार जब भी किसी उलझन में पड़ता। मोन्या की माँ उनसे ही राय लेती थी। इसलिए मोन्या से भी उन्होंने कहा, अच्छा देख अगर बेचरजी स्वामी ने हाँ कर दी तो ही मैं तुझे विलायत जाने दूँगी।

और बेचरजी स्वामी ने हाँ कर दी।

मोहन के विलायत जाने का दिन आ गया था। राजकोट हाईस्कूल के शिक्षकों और विद्यार्थियों ने उसे मानपत्र देने के लिए सभा बुलाई और उसके गुणों की खूब प्रशंसा की।

आखिर में मोन्या को बोलना था। मोन्या मंच पर जाने के लिए खड़ा हुआ मगर उसके पैर डगमगाने लगे, हाथ काँपने लगे। कागज़ में जो लिखकर लाया था, उसे बड़ी कठिनाई से अटक–अटककर पढ़ सका।

उन दिनों समुद्र पार करना बड़ा धार्मिक अपराध माना जाता था। जब मोन्या के विलायत जाने की बात फैली, तो मोन्या के समाज के कुछ लोगों ने सभा की। और निर्णय लिया कि अगर मोन्या विलायत जाता है तो उसके परिवार को समाज से बाहर माना जाएगा। लेकिन मोन्या ने साफ–साफ कहा ''मैंने विलायत जाने का फैसला कर लिया है, और मैं अपना निश्चय नहीं बदल सकता। आप खुशी से मुझे समाज से बाहर कर दें।''और 1888 को चार सितम्बर के दिन मोन्या एक जहाज के तीसरे दर्जे में लंदन की ओर यात्रा कर रहा था।

समुद्र की लहराती लहरों पर उछलता–कूदता जहाज आगे बढ़ रहा था। मगर मोहन्या उदास था, वह अपने प्यारे घर, दोस्तों को छोड़कर जा रहा था। जहाज में सिर्फ एक व्यक्ति 'वकील मजूमदार' उसके

पहचान के थे, बाकी सब अँग्रेज थे। वह भोजन परोसने वाले रसोइये स्टुअर्ट से भी बात करने में डरता। सोचता कहीं अँग्रेजी में कुछ गलत बोल दिया तो; तो क्या होगा। बड़ी उलझन में था मोन्या, कैसे पूछे कि किस भोजन में माँस–मछली नहीं है। छुरी–काँटे से खाने का अभ्यास भी तो नहीं था। रात को वह जहाज की छत पर चला जाता क्योंकि उसे रात का दृश्य बहुत भाता था। ऊपर टिमटिमाते तारों से भरा नीला आकाश, समुद्र की लहरों पर तैरती चाँदनी.. सब बहुत सुन्दर लगता।

कई दिनों की यात्रा के बाद जहाज लंदन पहुँचा। उसने फ्लालेन के सफेद कपड़े पहन रखे थे। वह अकेला यात्री था, जो काले कोटे में नहीं था। लंदन में सब कुछ अलग था। वहाँ का खान–पान, रहन–सहन, बोलचाल, सब कुछ अलग। मोन्या को शुरू–शुरू में कई दिनों बहुत बुरा लगता। कभी–कभी तो वह रात–रात भर रोता रहता। तब उसे लगता कि कैसे यहाँ तीन साल बिताएगा। धीरे–धीरे उसने अँग्रेजी कायदे, रहन–सहन के तौर तरीके, वहाँ का शिष्टाचार सब सीख लिया। यह सब सीखने में उसकी मदद की डॉक्टर प्राण जीवन मेहता ने। सुबह–सुबह वह जौ का दलिया खाता पर पेट न भरता। न मिर्च, न मसाला, उबली हुई सब्जियाँ भी उसके गले न उतरतीं।

आखिर में उसे वहाँ की फैरिंगटन स्ट्रीट में एक शाकाहारी भोजनालय का पता मिल गया। भोजन की समस्या तो हल हो गई। वेशभूषा में बदलाव लाने के लिए उसने एक रेशमी टाप हैट खरीदा। एक बढ़िया कोट सिलवाया, सोने की घड़ी चैन ली। अच्छे चमड़े के जूते खरीदे। मूँछें बढ़ा लीं और बाल बाईं ओर सँवारने लगे। टाई की गठान बाँधना भी कम मुश्किल काम नहीं था। मोन्या पहले तो आईना सिर्फ तब देखता था जब हजामत करवाने जाता। लेकिन यहाँ लंदन में तो टाई ठीक करने के लिए रोज ही आईने के सामने खड़ा रहना पड़ता था। लेकिन यह सब ज्यादा दिन नहीं चल सका।

आखिर में उसे समझ में आ ही गया। ''अरे इंग्लैण्ड में क्या जिंदगी बितानी है? लच्छेदार अँग्रेजी सीखकर, भाषण देकर, या फिर नाच–गाकर ही क्या सभ्य बना जा सकता है। तुझे तो विद्या पानी है।''

और इंग्लैण्ड की 'इनर टैम्पिल' संस्था में प्रवेश लिया। अब वह तड़क–भड़क से दूर रहता और खर्च पर भी पाई–पाई का हिसाब रखता। वहीं उसने एक छोटा–सा कमरा रहने के लिए ले लिया। पैदल ही वह अपने कॉलेज जाता। उसके इस जीवनयापन के तरीके का प्रभाव उसके आसपास के लोगों पर पड़ने लगा।

मोन्या के एक अँग्रेज मित्र ने उससे 'गीता पढ़ाने का आग्रह किया। लेकिन उसे संस्कृत का अच्छा ज्ञान न था। इसलिए उसने अँग्रेज मित्र को अँग्रेजी में अनुवाद कर 'गीता' पढ़ाई। और बदले में उससे 'बाईबिल' सीखी। 10 जून 1891 को उसने बैरिस्टर की परीक्षा पास कर ली।

तीन साल से ज्यादा समय के बाद वह भारत लौट रहा था। जहाज की छत पर मोन्या सोच रहा था– माँ कितनी अधीरता से प्रतीक्षा कर रही होगी, मिलते ही पूछेगी, ''मेरे वचनों का पालन किया'' और मैं कहूँगा ''उन्हें पालने के कारण ही तो मेरे सामने आने की हिम्मत जुटा पाया हूँ।''

लेकिन जहाज से उतरकर जब उसने अपने भाई से पूछा, ''भाई, माँ कैसी है?'' भाई चुप हो गया, और आँखें भीग गईं। मोन्या को बताया गया कि उसकी पढ़ाई में विघ्न न पहुँचे इसलिए उसे माँ की मृत्यु की खबर नहीं दी गई।

मोन्या ने मुंबई में एक दफ्तर खोला। खर्च बहुत

होता और आमदनी कम। बाद में वे मुंबई से राजकोट आ गए।

1893 में बैरिस्टर मोन्या को दादा अबदुल्ला एंड कम्पनी का एक पत्र मिला जिसमें अफ्रीका आने का लिखा था। उन्हें इस कम्पनी के लिए एक मुकदमा लड़ना था।

मोन्या 1893 मई को नेटाल बंदरगाह पर उतरा। वहाँ उतरते हुए उन्हें यूरोपीय और भारतीय के बीच भारी भेदभाव दिखाई दिया।

यूरोपीय गोरे भारतीयों को घृणा की दृष्टि से देखते थे। उन्हें 'काला कुली' कहा जाता था।

वहाँ गोरों को कृषि और उद्योगों में काम करने के लिए मेहनती लोगों की जरूरत पड़ती थी। चूँकि उस समय भारत पर अँग्रेजों का राज था। इसलिए भारत से वे मजदूरों को लोभ लालच देकर बुलाते। बाद में उनका शोषण करते, उन्हें ठीक मजदूरी नहीं मिलती, रहने के लिए उम्दा जगह भी न मिलती और तो और उनसे भद्दे तरीके का व्यवहार किया जाता। इन मजदूर भारतीयों को 'गिरमिटिया' कहा जाता।

मोन्या में बचपन से ही अन्याय को न सहने का गुण था। उसने इसी गुण के कारण अफ्रीका में एक लम्बी लड़ाई लड़ी। और उसे भारतीयों को न्याय दिलाने के लिए इक्कीस साल तक अफ्रीका में रुकना पड़ा। इन इक्कीस सालों में कई बार उसने मार खाई। कई अपमान झेले मगर हार न मानी। एक बार तो उसे आरक्षित डिब्बे से टिकिट होने के बावजूद उतार दिया क्योंकि उसमें सिर्फ गोरे ही सफर कर सकते थे। ठण्ड की रात में तब मोहनदास उर्फ मोन्या तब तक प्लेटफार्म पर सिकुड़ते रहे, जब तक कि उन्हें उसी डिब्बे में जगह न मिल गई।

एक बार वह पगड़ी लगाए ही मजिस्ट्रेट के सामने हाजिर हुआ। उन दिनों पगड़ी उतारकर ही मजिस्ट्रेट के सामने हाजिर हो सकते थे। लेकिन मोन्या ने मजिस्ट्रेट की इस गैर वाजिब बात को मानने से इंकार कर दिया। फिर क्या था, उसे वहाँ से बाहर निकाल दिया गया। ऐसे अपमानों की तो जैसे गिनती ही नहीं थी। उन दिनों गोरों के भेदभाव के चलते भारतीय होना ही जैसे कोई अपराध था। मगर मोन्या ने इस सबका सामना करते हुए अफ्रीका में बसे भारतीयों को उनके अधिकार दिलवाए।

मोहनदास अब तक अफ्रीका में बहुत प्रसिद्धि पा चुके थे। अफ्रीका में ही डरबन में उन्होंने सौ एकड़ भूमि पर एक आश्रम खोला – 'फीनिक्स आश्रम। कहते हैं एक बार जब मोहनदास जोहंसवर्ग से डरबन आ रहे थे तो उनके एक मित्र पोलक ने उन्हें एक पुस्तक दी।

पुस्तक का नाम था 'अन टू दिस लास्ट।' इस पुस्तक को पढ़कर ही मोहनदास ने यह आश्रम खोला। और इस पुस्तक का गुजराती में 'सर्वोदयी' नाम से अनुवाद भी किया। इस पुस्तक का मोहनदास पर काफी प्रभाव पड़ा।

जब तक वे अफ्रीका में रहे जनहित के कामों में लगे रहे।

9 जनवरी 1915 को वे भारत लौटे। मोहनदास कर्मचंद गाँधी के अफ्रीका में किए गए कामों की खबर भारतीयों को भी थी। इसलिए जब वे बंदरगाह पर उतरे तो हजारों लोगों ने उन्हें घेर लिया। क्योंकि भारत में भी भारतीयों की दशा अच्छी नहीं थी। रास्ते

में ही कई लोगों ने उनसे अँग्रेजी सरकार की शिकायतें कीं। कोई सरकार की इस बात से दुखी था कि फसल न होने के बावजूद उससे कर लिया गया है तो कोई अकारण जेल में बन्द कर दिए जाने की बात से।

सबको यही उम्मीद थी कि मोहनदास गाँधी उनको इन समस्याओं से मुक्ति दिलाएंगे।

अब भारत में भी मोहनदास के हजारों भक्त हो गए। कोई उन्हें 'महात्मा' कहता, तो कई 'बापू गाँधी', और कोई 'महात्मा गाँधी'।

जो भी कोई शिकायत लेकर आता। और अगर महात्मागाँधी को लगता कि उसकी शिकायत जायज़ है। वे उसका साथ देते। उन्होंने शांतिपूर्ण आन्दोलनों की सहायता से कई बड़े–बड़े काम किए।

बिहार की ही बात ले लें। बिहार के एक जिले चंपारन में लोग नील की खेती करते थे।

अँग्रेजों का वहाँ के किसानों के लिए यह हुक्म था कि वे अपनी जमीन के एक हिस्से पर नील की ही खेती करें और यह नील, अँग्रेज बहुत थोड़े पैसे देकर भारतीयों से ले लेते थे। कुछ किसानों ने जब गाँधीजी को यह समस्या बताई तो वे चंपारन गए। और आखिर में अँग्रेजी सरकार को यह कानून रद्द करना पड़ा।

अब तो पूरे भारत में महात्मागाँधी को लोगों ने अपना नेता मान लिया।

अँग्रेजी सरकार के खिलाफ कई आंदोलन किए। उनकी एक आवाज पर लाखों लोग जुट जाते। नमक पर कर लगाकर सरकार ने नमक की कीमतें बढ़ाई। गाँधीजी ने इसके विरोध में आश्रम के 78 लोगों को साथ लेकर नमक–कानून तोड़ा। और दांडी नामक जगह से नमक निकाला। भारत का शासन अँग्रेज़ों के हाथ में था। अँग्रेजी सरकार भारतीयों पर नए–नए कर लगाती और जैसे–तैसे लाभ कमाकर पैसा अपने देश भेजती। इस तरह भारतीयों की कमाई का बड़ा हिस्सा बाहर चला जाता। और देश गरीब से गरीब होता चला गया। भारतीयों के हाथों में ही भारत का शासन हो। इसके लिए लड़ी गई लम्बी लड़ाई में भी गाँधीजी का बड़ा योगदान रहा। असहयोग आंदोलन सविनय अवज्ञा आंदोलन, भारत छोड़ो आंदोलन के अलावा और भी कई आंदोलन गाँधीजी ने किए जिनके बारे में तुम अगली कक्षाओं में पढ़ोगे।

प्यारे चाचाजी,

आपको, चाचीजी को प्रणाम। रेखा कैसी है।

आजकल मुझे बुखार आया हुआ है। उसके पहले एक दिन स्कूल जाते हुए मैं साइकिल से गिर पड़ा था तो चोट लग गई थी। वो साइकिल बड़ी है न तो उस दिन मैंने कैंची के बजाए डंडे पर चढ़कर साइकिल चलाने की कोशिश की। अब चढ़ तो गया और खूब तेज़ी से साइकिल चलाई लेकिन उतरते समय पैर नीचे नहीं रख पाया और लुढ़क गया। और कंकड़ घुटने में घुस गया। पिताजी तुरंत डॉक्टर के पास ले गए और उन्होंने एक इंजेक्शन लगा दिया। तो अभी दवाई खा रहा हूं - बहुत कड़वी लगती है। मन करता है कि फेंक दूं लेकिन मां ने कहा कि नहीं खाओगे तो ठीक नहीं होगे।

पिछली बार मैं जब रीवा आया था तो टीवी देखा था। वापस शाहपुर आकर मैंने पापा से जिद किया कि टीवी लाओ। हां अभी एक हफ्ते पहले यहाँ खूब बारिश हुई। इतनी तेज कि माचना पूर आई। इधर मगरडोह वाला नाला भी पूर आया। तो बीच में खूब सारी गाड़ियाँ फंस गई। उन दो दिनों में तो बीच वाले हिस्से में दुकानों ने खूब मंहगा समान बेचा। एक ड्राइवर ने तो कहा कि दुकान वाली बाई ने 10 रुपए की थोड़ी सी मिर्ची दी। एक ट्रक में सेवफल जा रहा था तो गाड़ी वाले सड़ा-सड़ा सेवफल फेंकते जा रहे थे।

पिताजी कह रहे हैं कि इसी जगह में उन्हें भी चिट्ठी लिखना है। इसलिए अब रोक रहा हूं।

आपको, चाचीजी को सादर प्रणाम और रेखा को प्यार

आपका भतीजा

राजेश

● तुमने राजेश की चिट्ठी पढ़ी। अब तुम भी किसी को चिट्ठी लिखो।

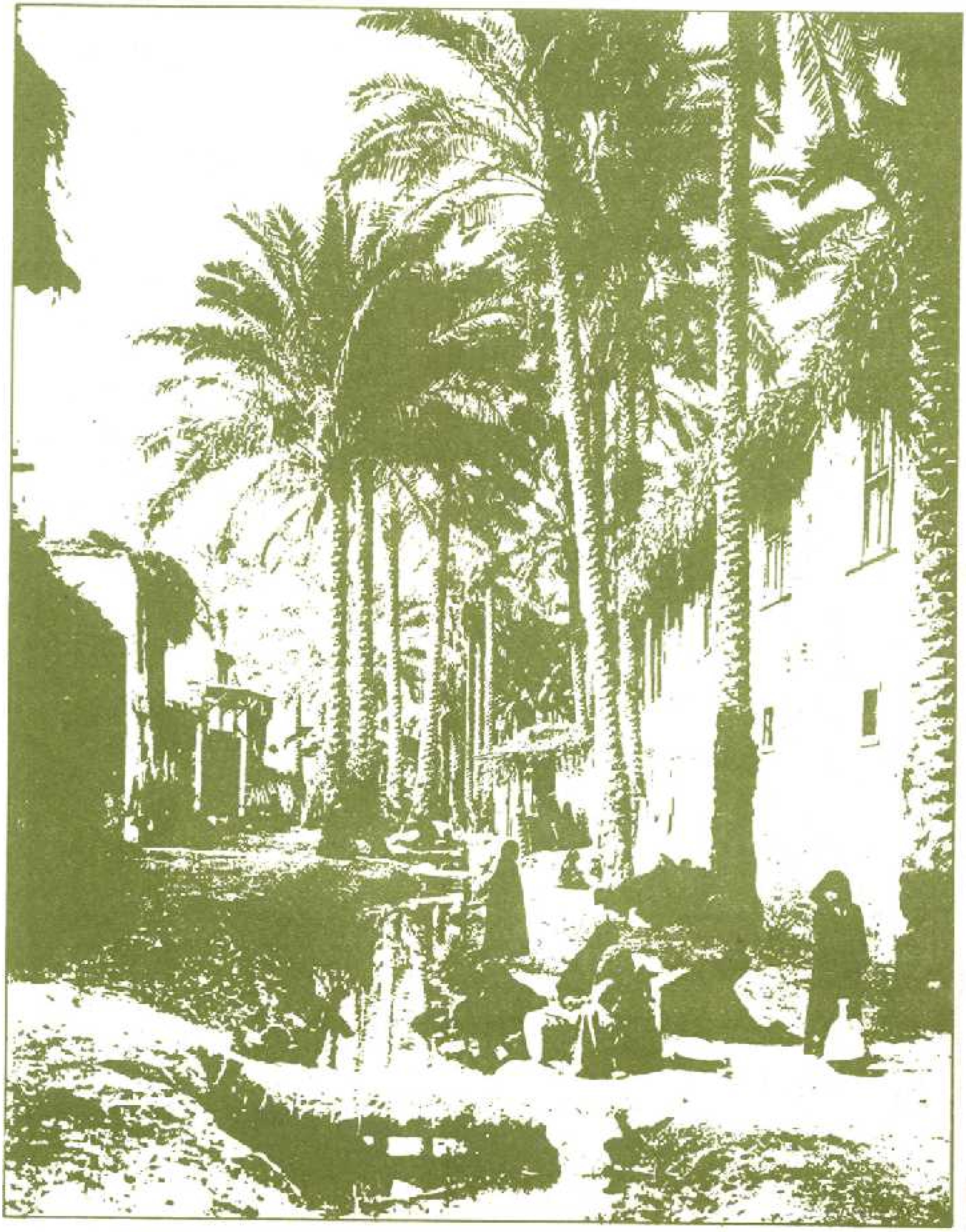

ISBN: 978-81-89976-04-0

मूल्य: ₹ 70.00